चेतना विकास मूल्य शिक्षा

कक्षा – 3

प्रकाशक

संरक्षण एवं मार्गदर्शन

ए. नागराज
प्रणेता
मध्यस्थ दर्शन (सह–अस्तित्ववाद)

लेखन
साधन भट्टाचार्य
श्रीराम नरसिम्हन
कुमार संभव, सोम त्यागी
बी.आर. अग्रवाल, अंजनी कुमार
श्रीमती सुवर्णा योगेश

प्राक्कथन

मानवीय शिक्षा का प्राक्कथन एक आवश्यकता के रूप में हमें महसूस हुआ। क्योंकि यह पाठ्यपुस्तिका का उपक्रम पहली कक्षा से प्रस्तुत किया गया है। क्रम से परंपरागत होने तक सिलसिला बना ही रहेगा। सहअस्तित्व अपने स्वरूप में व्यापक वस्तु में ही सम्पूर्ण एक–एक वस्तु जैसा परमाणु, अणु, ग्रह, गोल, सौर व्यूह, आकाश गंगा। यह डूबी, भीगी, घिरी होने के आधार पर नियंत्रण, क्रियाशीलता और ऊर्जा सम्पन्नता प्रत्येक वस्तु में नित्य प्रमाण के रूप में देखा गया है। साथ में यह भी समझा गया है कि व्यापक वस्तु में समाहित सम्पूर्ण एक–एक वस्तुओं की अविभाज्यता नित्य वर्तमान है। यही सह–अस्तित्ववादी विश्व–दृष्टिकोण का मूल रूप है। ऐसे सहअस्तित्व नित्य प्रभावी रहना स्वाभाविक है।

सहअस्तित्व को ध्यान में रखते हुए प्रथम कक्षा से अर्थात् अक्षराभ्यास से चलकर शब्दों का अभ्यास और शब्दों के अभ्यास से अर्थ का अभ्यास, अर्थों के अभ्यास के तात्पर्य में हर शब्द किसी वस्तु का, क्रिया का अथवा फल–परिणाम का नाम है। ऐसा अर्थ इंगित होना ही शब्द से अर्थ समझा गया है। इसलिए अर्थबोध करने के उपक्रम में शिक्षा विधा को अध्ययन के रूप में प्रस्तुत करने का सौभाग्य प्रस्तुत हुआ। यह पठन विधि से अर्थ बोध तक पहुंचने का मार्ग प्रशस्त हुआ। इसे प्रस्तावित करना इसलिए आवश्यक समझा गया कि मानव सह–अस्तित्व विधि से ही समुदाय चेतना से मानव चेतना में संतुलित होना है। मानव चेतना का प्रयोजन, समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व पूर्वक जीने का प्रमाण है। इससे अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था की पहचान होना स्वाभाविक है।

यह तो सटीक है कि विगत विधि से जो पाठ–पठन का लक्ष्य था, उसे आगे पढ़ाने के जिल भी उपायों को खोजा गया है, वह सब सार्थक है, मूलतः मानवीय शिक्षा के अभाव वश सामुदायिकता, मतभेद, साम, दाम, दण्ड, भेद, परस्पर समुदायों की निहित अतिशोधों का विश्वास प्रयोग हो चुका है। इन सब अभिशापों से मुक्ति पाने की आकांक्षा मानव में निहित होना भी पाया गया। इसलिए मानवीय शिक्षा का निश्चयीकरण आवश्यक समझा गया है। इसे क्रियान्वयन करने की क्रमविधि से प्रस्तुत किया।

मानवीय शिक्षा में मानव का अध्ययन प्रधान उद्देश्य है। इस उद्देश्य को साथ्रक बनाने के क्रम में प्रथम कक्षा से ही सूत्रपात रूप में मूल्य संबंधी और शरीर के अवयव संबंधी शब्दों का अधिकतम चयन किया गया है। साथ में परस्पर मानव संबंधों से संबंधित शब्दों का चयन किया गया है। इसे हर बालक अथवा किशोर आसानी से पहचान पायेगा। ऐसी हमारी स्वीकृति है। यह सार्थक और सफल होना पाया गया है। भव्यि में मूल्यांकन होता रहेगा। इस विधि से सर्व शुभहोने की कामना है।

ए. नागराज
प्रणेता
मध्यस्थ दर्शन (सहअस्तित्ववाद)
श्री नर्मदांचद, भजनाश्रम, अमरकंटक
जिला अनूपपुर (मध्यप्रदेश)

भूमिका

विज्ञान शिक्षा से छात्र–छात्राओं एवं युवाओं में तर्कशक्ति का अभूतपूर्व विकास हुआ है। जिससे आस्था (बिना जाने मान लेना) की प्रवृत्ति में कमी आई है। अतः परंपरागत शैली जिसमें यह करो, यह न करो अथवा "ऐसा जीना चाहिए" आदि उपदेश विद्यार्थियों में अब प्रभावशाली सिद्ध नहीं हो पा रहे हैं। ऐसे में परिवारोन्मुखी, समाजोन्मुखी शिक्षा के सार्वभौम स्वरूप पर चिंतन की आवश्यकता है।

यूनेस्को ———— द्वारा अपेक्षित शिक्षा के चार स्तम्भों में मुख्य स्तम्भ ————— अर्थात् "साथ–साथ जीना सीखना" पर जोर दिया है।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार ने मानव मूल्य शिक्षा हेतु निम्न मार्गदर्शन दिया है–

1. पाठ्यक्रम किसी भी प्रकार के अंधविश्वास, कर्मकाण्ड व पूजन पद्धति से मुक्त हो।
2. पाठ्यक्रम रहस्यवाद, सम्प्रदायवाद व व्यक्तिवाद से मुक्त हो।
3. पाठ्यक्रम "करो, न करो" आदि उपदेश न होकर तर्कपूर्ण हो, तर्कपूर्ण ढंग से इसका प्रयोग एवं विश्लेषण द्वारा परीक्षण कर सकते हो।
4. पाठ्यक्रम को आचरण में प्रमाणित किया जा सकता हो।
5. पाठ्यक्रम दर्शन आधारित हो।

आधुनिक शिक्षा को रोजगारोन्मुखी ही नहीं बल्कि परिवारोन्मुखी, समाजोन्मुखी भी होने की आवश्यकता है, ताकि हर परिवार समाधान, समृद्धिपूर्वक जी सके। समाधान का अर्थ मानव संबंधों में परस्पर तृप्ति एवं प्रकृति के साथ संतुलनपूर्वक जीना है। समृद्धि अर्थात् अभाव–मुक्त जीना इस आशा की पूर्ति के लिए मानवीय मूल्यों के शिक्षक की आवश्यकता महसूस की जाती रही है।

मध्यस्थ दर्शन (सह–अस्तित्ववाद) उपरोक्त सभी कसौटियों को पूरा करता है, जिसका परिचय "जीवन विद्या शिविरों" के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। मध्यस्थ दर्शन से विस्तृत चेतना विकास मूल्य शिक्षा मानव में पाँच सद्गुणों को सुनिश्चित करती है –

1. स्वयं में विश्वास
2. श्रेष्ठता का सम्मान
3. प्रतिभा एवं व्यक्तित्व में संतुलन
4. व्यवसाय में स्वावलंबन
5. व्यवहार में सामाजिकता

आज धरती एक गाँव ———— हो गयी है। अतः विश्व शांति हेतु वैश्विक नागरिक ——— अर्थात् सार्वभौम मानवीय आचरण को पहचानने की आवश्यकता है। चेतना विकास मूल्य शिक्षा के प्रकाश में सार्वभौम मानवीय आचरण, सार्वभौम मानवीय शिक्षा, सार्वभौम मानवीय व्यवस्था, सार्वभौम मानवीय संविधान का व्यावहारिक स्वरूप व्याख्यायित होता है। साथ ही "मानव में समानता" व धर्मनिरपेक्षता का व्यावहारिक स्वरूप प्रकट होता है जिससे "मानव जाति एक, मानव धर्म एक" पूर्वक जीने की राह प्रशस्त होती है।

विश्व के इतिहास में शायद पहली बार हुआ है कि संपूर्ण दर्शन को प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर पहुंचाया गया हो। राज्य शासन ने कक्षा 10वीं तक अध्ययन करने वाले सभी बच्चों को सहअस्तित्व का महत्व इस दर्शन के माध्यम से सिखाने का निर्णय लिया है। यह पुस्तक इसी प्रयास का एक भाग है। हम आशा करते हैं कि शिक्षक स्वविवेक के साथ इस पुस्तक का उपयोग करके इस महती उद्देश्य की पूर्ति करेंगे। जाहिर है आपके सुझावों का हमें हमेशा इंतजार रहेगा।

नंद कुमार (भा.प्र.से.)

संचालक

लेखकीय

प्रत्येक शिशु जन्म से ही न्यायापेक्षी, सही कार्य–व्यवहार करने वाला एंव सत्य वक्ता होता है, परन्तु न्याय, सही कार्य–व्यवहार एवं सत्य से शिशु अनभिज्ञ रहता है। इन्हें समझने के लिए वह परम्परा पर, मुख्यतः शिक्षा परम्परा पर आश्रित रहता है। इस हेतु आज्ञापालन, अनुसरण, अनुकरण एवं जिज्ञासा सम्पन्न रहता है।

प्राथमिक कक्षा में प्रवेश के पूर्व ही सभी शिशु अपनी मातृभाषा को समझने व बोलने की योग्यता से सम्पन्न होते हैं एवं अपने परिवेश के प्रायः सभी कार्य–व्यवहार व वस्तुओं को पहचानते हैं। अपने परिवेश के अनुसार मान्यता व विचार संपन्न रहते हैं।

विद्यालय में प्रवेश के साथ शिक्षा में अक्षर, शब्दों एवं अंकों को पहचानने व लिखने का कार्य शिक्षा की प्रमुख वस्तु होती है जबकि सभी विद्यार्थी अनेक वाक्यों को बोलने, अनेक वाक्य बनाने में समर्थ रहते हैं। उनकी इस पूर्व योग्यता को बढ़ाने के लिए शिक्षा में स्पष्ट कार्यक्रम का अत्याभाव है फलतः शिक्षा में पर्याप्त रूचि नहीं बनती। इसी के साथ प्राथमिक स्तर पर स्वयं पढ़कर समझने–सीखने की योग्यता अधिकांश विद्यार्थियों में विकसित नहीं होती है और वे अधिकांशतः शिक्षक पर ही आश्रित रहते हैं। इसे पूरा करना ही शिक्षक की सार्थकता है।

अस्तु विद्यार्थियों की योग्यता के अनुसार मानवीय चेतना विकसित करने हेतु एवं शिक्षकों की सार्थकता प्रमाणित होने के उद्‌देश्य से 'चेतना विकास मूल्य शिक्षा' के पाठ्यपुस्तकों को लिखा गया है।

हमें विश्वास है यह पुस्तक इन अर्थों को प्राप्त करने में सफल होगा।

चेतना विकास मूल्य शिक्षा की पुस्तक प्रथम बार लिखी गई है अतः इसमें सुधार की अपार सम्भावनाएँ हैं। विद्वान अध्यापकगणों से इस हेतु सतत् मार्गदर्शन की अपेक्षा है।

लेखकगण

प्रथम संस्करण की भूमिका

चेतना विकास मूल्य शिक्षा पर कक्षा 1 से 5 तक पुस्तक 2009 में लिखी गई।

प्रथम बार पुस्तक लिखने तथा अल्प समय में इसे पूरा करने के कारण व्याकरण संबंधी एवं टंकण संबंधी भूल भी रही। कक्षा 1 से सभी पाठ कविता में हैं। एवं कविता में तुकबंदी का अभाव था।

प्रथम संस्करण में शिक्षा की वस्तु को यथावत रखते हुये व्याकरण में सुधार किया गया है एवं कविताओं में तुकबंदी पर थोड़ा ध्यान दिया गया है। कुछ तकनीकी से संबंधित पाठों को हटा दिया गया है।

हमें विश्वास है पुस्तक विद्यार्थियों के लिए सुबोध होगा।

लेखकगण

अनुक्रमणिका

भाग	पाठ	नाम	पृ. संख्या
1. मानव लक्ष्य	पाठ 1	मानव लक्ष्य	
2. समग्र व्यवस्था	पाठ 2	अस्तित्व	
	पाठ 3	पदार्थ अवस्था	
	पाठ 4	प्राणावस्था	
	पाठ 5	जीवावस्था	
	पाठ 6	ज्ञानावस्था	
3. अखण्ड समाज	पाठ 7	परिवार	
	पाठ 8	मानव संबंध	
	पाठ 9	मानव समाज	
	पाठ 10	पूरकता	
	पाठ 11	सुरक्षा	
	पाठ 12	अच्छा बनना चाहता	
	पाठ 13	उत्सव	
	पाठ 14	मानव के चार आयाम	
	पाठ 15	व्यवसाय	
	पाठ 16	विनिमय	
	पाठ 17	शरीर रचना	
	पाठ 18	आहार	
	पाठ 19	औषधि	
	पाठ 20	शरीर स्वच्छता	

वंदना

वंदना उनकी करें, जिनसे सुशोभित है धरा।
जिनसे है मानव का पथ, प्रकाश ज्योति से भरा।।

जिनसे दिशा हमको मिली, नित मानवीय मार्ग की।
पथ मिला निश्चित हमें थी, कामना जिस मार्ग की।।
कृतज्ञता से सौम्यता की, नित्य आयी निरंतरा।
जिनसे है मानव का पथ, प्रकाश ज्योति से भरा।।

जिनका है चिन्तन शुभ यही, कैसे हो मानव सुखमयी?
प्रेरणा से जिनकी है, मानव का जीवन सुखमयी।।
श्रद्धा समर्पित जिनसे आए, मानवीय परम्परा।
जिनसे है मानव का पथ, प्रकाश ज्योति से भरा।।

सबके सुख की कामना ले, रहती जिनकी कल्पना।
निकली जिनसे मानवीय पथ, हेतु निश्चित योजना।।
पूज्यता उन हेतु जिनसे, है सुसज्जित वसुन्धरा।
जिनसे है मानव का पथ, प्रकाश जयोति से भरा।।
–प्रदीप पूरक, बिजनौर (उ.प्र.)

tàÂàw vÕu

t tàÂàw yÂmàÂà Ñ ñ t âÂàÊÂmÊ yhã ÊÑÂàà jàÑmà/ jàÑmã Ñ ñ t yt l §ýÊ yhã Ñàmà/Ñàmã Ñ ñ ÑÊ tàÂàw âÂàÊÂmÊ yhã ÊÑÂàà jàÑmà Ñ ñ yt l §ýÊ Ñã yhã Ñàmà Ñ ñ

tÊ tàmà áqmà ¡àÊ ªàÚkÂà tÊ sv §ý âv¥ ¡àÊ t l yt l ÀàÊ rÂààÂà §ý âv¥ Zàuày §ýÊm Ñ ñ uÑ t Ðwã§ýàÊmà/Ðwã§ýàÊmã Ñ ¢yâv¥ £Âà§ýà ¡àÖààqàvÂà §ýÊmà/§ýÊmã Ñ ¡àÊ £Âà§ §ýàuà §ýà ¡Âà§ýÊ½à §ýÊmà/§ýÊmã Ñ ñ

tÊ tàmà âqmà tÊã ¡àwÎu§ýmà¡à §ýà ÁuàÂà Êhm Ñ ñ tÊ sàkÂà, wÐØà, ÐwàÐ¿u ¡àÊ âÎàÕàà yàtªàã §ýL ¡àwÎu§ýmà¡à §ýà qÊà §ýÊm ÊÑm Ñ ñ

t tàmà, âqmà, sà¢, rÑÂà âtØà ¡àÊ ªàÚkã qÊ âwÎwày §ýÊmà/§ýÊmã Ñ ñ w sã tÊà âwÎwày §ýÊm Ñ ñ t yt l ÀàÊ ÑàÂà ¡àÊ yr§ý yàn kãÂà t yÕàt ÑàÂà §ý âv¥ âwùàvu kàmà/kàmã Ñ ñ

yt l ÀàÊ ÑàÂàà ¡àÊ yr§ý yàn kãÂàà tàÂàw vÕu Ñ ñ

¡Ðm¾w

¡à§ýàÎà, yu, jÂôtà, màÊ, ÑtàÊã q¿wã, ¡Âu ªàÑ, £qªàÑ ¢Âà yr§ýà ¥§ý yàn ¡Ðm¾w §ýÑm Ñ ñ

¡à§ýàÎà §ýà hàvã ÐnàÂà uà ÎàÂu sã §ýÑm Ñ ñ

ysã ªàÑ-£qªàÑ màÊ ¡à§ýàÎà t Ñã qàu kàm Ñ ñ ysã ªàÑ §ý ysã ¡àÊ hàvã ÐnàÂà uà ¡à§ýàÎà Ñ ñ Zà¾u§ý màÊ §ý ysã ¡àÊ sã ÎàÂu uà ¡à§ýàÎà Ñ ñ

¡à§ýàÎà ¡yãt Ñ ñ ¢y§ýL §ýà¢ yãtà ÂàÑã Ñ ñ ¢y§ýà §ýà¢ â§ýÂààÊà ÂàÑã Ñ ñ ¡à§ýàÎà t âkmÂàà sã ¡àªà r¼m Ñ, ¡àªà sã ¡à§ýàÎà Ñã âÀhà¢ Àmà Ñ ñ ¡à§ýàÎà qàÊÀÎàJ Ñ ¨uàà§ý ¢yt qàu kàÂà wàv ªàÑà §ýà, màÊà §ýà Ñt Àh y§ým Ñ ñ

Ñt âÀÂà ¡àÊ Êàm Ñàm Ñ¥ Àhm Ñ ñ q¿wã ¡qÂàã oÊã qÊ itmã Ñ ñ ¢y §ýàÊ½à âÀÂà ¡àÊ Êàm Ñàmà Ñ ñ q¿wã ¡qÂàã oÊã qÊ âÂàÊÂmÊ itmã Ñ ñ ¢yt §ýsã sã §ýà¢ qáÊwmÂà ÂàÑã Ñàmà, ÑtÎàà ¥§ý kyà ÊÑmà Ñ ñ uÑ âÂàut Ñ ñ

q¿wã §ýL mÊÑ jÂôtà sã ¡qÂàã oÊã qÊ i½àÂà §ýÊmà Ñ ñ q¿wã yu §ý jàÊà ¡àÊ qáÊ§ýtà §ýÊmã Ñ, ¢yâv¥ ¦ým¥ Ñàmã Ñ ñ q¿wã âÂàÊÂmÊ yu §ýL qáÊ§ýtà t ÊÑmã Ñ ñ uÑ âÂàut Ñ ñ

qàº - 3

qÀàn ¡wÐnà

qw §ýL §ýÕàà ¡à t qÀànàwÐnà §ý ràÊ t yàtàÂu qáÊju qà j§ý Ñ ñ âtSã, q¾nÊ, kv ¡àÊ wàu §ýà Ñt qÀàn ¡wÐnà §ýÑm Ñ ñ

qÀàn ¡wÐnà mãÂà ÐwÚq t qà¢ kàmã Ñ - ºày, mÊv ¡àÊ âwÊv ñ

ºày wÐm ¡à §ýà ¡à§ýàÊ ¥§ý kyà rÂàà ÊÑmà Ñ ñ ky q¾nÊ, âtSã, qÂà, q0Âyv, qÐm§ý, t§ýàÂà ¡ààÀ ºày Ñ ñ

ôw uà mÊv wÐm ¡à §ýà ¡à§ýàÊ rÀv y§ýmà Ñ, ¢ÂÑ âky ¡à§ýàÊ §ý qàØà t ÊhmÑ £yã ¡à§ýàÊ t ¼v kàm Ñ ñ ky qàÂàã §ýà i» t ÊhÂà qÊ i» §ý ¡à§ýàÊ t ÊÑmà Ñ ñ ¢yã qàÂàã §ýà ràÌ¹ã t »àvÂà qÊ, ràÌ¹ã §ý ¡à§ýàÊ t ¼v kàmà Ñ ñ ¢yã Zà§ýàÊ ¢y ¡Âà§ý ràmv t sã sÊ y§ým Ñ, uÑ ràmv §ý ¡à§ýàÊ t Ñà kàmà Ñ ñ

ysã ôw uà mÊv ¼àv §ýL ¡àÊ rÑm Ñ ñ qàÂàã, Ào, mv mÊv Ñ ñ

wàu âwÊv wÐm Ñ ñ âwÊv ÀÊ-ÀÊ m§ý Äýv kàmà Ñ ñ ¢y§ýà ¡à§ýàÊ sã rÀvmà ÊÑmà Ñ ñ ky ¥§ý §ýtÊ t ¡ªàÊrÙàã kvàÂà qÊ £y§ýL yªàÂo qÊ §ýtÊ t Äýv kàmã Ñ ñ Zààuß âwÊv £qÊ §ýL ¡àÊ kàm Ñ ñ

qàÂàã ôw (mÊv) Ñ ñ rÄý ºày Ñ ¥w sàq âwÊv Ñ ñ rÄý §ýà ªàt §ýÊÂà qÊ qàÂàã rÂà kàmà Ñ ñ ¥w qàÂàã §ýà ªàt §ýÊÂà qÊ wàÏq (sàq) rÂà kàmà Ñ ñ wàÏq §ýà º»à §ýÊÂà qÊ qàÂàã rÂà kàmà Ñ ¥w qàÂàã §ýà º»à §ýÊÂà qÊ rÄý rÂà kàmà Ñ ñ ¥y ràÊ-ràÊ §ýÊ mà sã uÑ Ñàmà ÊÑmà Ñ ñ uÑ ¥§ý j§ýLu §ýt Ñ ñ uÑ âÂàut Ñ ñ

qàº - 4

Zàà½ààwÐnà

qw §ýÕàà t uÑ Ñt yt l j §ý Ñ â§ý q»| - qào Zàà½ààwÐnà t ¡àm Ñ ñ wÕà, l à»|ã, rv uà vmà ¥w Îàà§ý uà iày - u jàÊ Zà§ýàÊ y Zàà½ààwÐnà §ýà qÑ jàÂà y§ým Ñ ñ

oÊmã qÊ ytÐm ÑáÊuàvã wÂàÐqâm t Ñã Ñ ñ tàÂàw wÂàÐqâmuà §ýà qÑ jàÂàmà Ñ ñ tàÂàw wÂàÐqâmuà §ýà ¡àÑàÊ ¡àÊ ¡àxâo §ý Úq t qÑ jàÂàmà Ñ ñ

wÂàÐqâm yu §ýL £Ït à §ýà qÙàà y ªàÑ½à §ýÊmã Ñ ñ u k»| §ý õàÊà oÊmã t 0Ðnm kv ¥w ¡Âu qàx§ý wÐm ¡à §ýà ªàÑ½à §ýÊm Ñ ¡àÊ ¡qÂàà sàkÂà rÂààm Ñ ñ ¢yy q»| -qào q~| Ñàm Ñ ñ q~| ÑàÂà §ýà ¡n Ñ r»| Ñàm Ñ ñ wÂàÐqâmuà t âÂà0Îjm ytu t Äýv ¡àm Ñ ñ Äýv y Äýv ¥w rãk rÂàmà Ñ ñ rãk y qÂàß Äýv, Äýv ¡àÊ rãk qÀà Ñàm Ñ ñ uÑ ÑtÎàà Ñàmà Ñ ñ ¢y âÂàut §ýÑm Ñ ñ uÑ ÍuwÐnà Ñ ñ

Zà¾u§ý qào §ý £ªàÂà §ýà ¥§ý âÂà0Îjm ytu Ñàmà Ñ ñ ky ¡àt §ýà qàoà, Âààt §ýà qàoà, oàÂà rÊyàm t £ªàm Ñ ñ ªàÑ, jÂàà, t¹|Ê Îààm ¦ým §ý ZààÊs t £ªàm Ñ ñ ¢yã Zà§ýàÊ Zà¾u§ý qào t Äýv ¥w Äýv ¡àÂà §ýà sã ytu âÂà0Îjm Ñàmà Ñ ñ ky oàÂà t rÊyàm §ý ¡m t Äýv ¡àm Ñ ¥w Îààm ¦ým §ý ZààÊs t rãk q§ý kàm Ñ ñ ªàÑ §ý qào t ryÂm ¦ým t Äýv ¡àm Ñ ¥w ªààÏt t ¢y§ý rãk q§ý kàm Ñ ñ

¢y Zà§ýàÊ Ñt uÑ yt l m Ñ â§ý Zà¾u§ý qào §ý £ªàÂà, ÄývÂà ¥w ÄývÂà §ýà ytu âÂà0Îjm Ñàmà Ñ ñ uÑ ÍuwÐnà Ñ ñ

q»| - qào §ýL vÈrà¢ - ¤ýjà¢ âÂà0Îjm Ñàmã Ñ ñ ky ¡àt §ý wÕà rÑm ¤ýj Ñàm Ñ ñ ªàÑ, oàÂà ky qào ²|à¹| Ñàm Ñ ñ ¢ÂÑ rÑm hàÀ ¡àÊ qàÂàã ÀÂà qÊ sã ¡àt âkmÂà r»| ÂàÑã Ñàm ñ

q»| -qào §ýL Zà¾u§ý Zàkààm t vÈrà¢, ¤ýjà¢ âÂà0Îjm Ñàmã Ñ ñ ¢y Zàà½ààwÐnà t âÂàuØà½à §ýÑm Ñ ñ âÂàuØà½à, ÍuwÐnà Ñ ñ

qàºþ - 5

kãw ¡wÐnà

qw §ýÕàà t Ñ tÂà y t l à Ñ á§ý qÎà-qÕàãuà §ýà yuQý Úq t kãw ¡wÐnà §ýÑm Ñ ñ u s jÊ, kv jÊ ¥w Âàs jÊ §ý Úq t rà¹þ kàm Ñ ñ kãw ¡wÐnà t Îàà§ýàÑàÊã ¥w tàyàÑàÊã wªà §ý kãw Ñàm Ñ ñ

tÂàÏu §ý¢ Zà§ýàÊ §ý qÎà ¡ à §ýà qàvm Ñ ñ tÂàÏu ¢Âà§ýL yÊÕàà §ýÊm Ñ, ¢Âà§ý sàkÂà §ýà Zàro §ýÊm Ñ ¡àÊ ¢Âày Ào, ¤ýÂà kyã £quàªàã wÐm¥ ZààÃm §ýÊm Ñ ñ

ysã kãwà §ýà ¡àÑàÊ âÂà0Î j m Ñàmà Ñ ñ ¢y t u §ýà¢ sã qáÊwmÂà ÂàÑã §ýÊm Ñ ñ ky ªààu §ý¢ Zà§ýàÊ §ý q»þ - qàoà §ýà hàmã Ñ ¥w §ý¢ Zà§ýàÊ §ý qàoà §ýà ÂàÑã hàmã ñ ªààu omÊà §ýà ÂàÑã hàmã ñ ªààu §ý r°j sã wyà Ñã ¡àÑàÊ §ýÊm Ñ ñ

ªààu ¡qÂà r°jà §ýà Ào âqvàmã Ñ, £Âà§ýL yÊÕàà §ýÊmã Ñ ñ ysã kãw ¡qÂà yÂmàÂàà §ýL yÊÕàà §ýÊm Ñ ñ ysã kãwà §ý kãÂà §ýà ¼þªà âÂà0Î j m Ñàmà Ñ ñ kãw ÍuwÐnà t kãm Ñ ñ

qàºþ - 6

ÖààÂààwÐnà

qw §ýÕàà ¡ à t y t l j §ý Ñ â§ý tàÂàw ÖààÂààwÐnà §ýL ¢§ýà¢ Ñ ñ ysã tàÂàw §ýL Ê j Âàà y tàÂà Ñ ñ ysã tàÂàw §ýà vÕu sã y tàÂà Ñ ñ ysã tàÂàw §ýÌqÂàà §ýÊm Ñ ¥w ÎàÊãÊ §ý õàÊà §ýÌqÂàà §ýà yà§ýàÊ §ýÊm Ñ ñ

Ñ t uÑ sã y t l j §ý Ñ â§ý âkmÂàà jàÑ £mÂàà §ýÌqÂàà §ýÊ y§ým Ñ ñ Ñ tàÊ §ýÌqÂàà §ýÊÂà §ýL ÎààQý §ýt ÂàÑã Ñàmã ñ

kr §ýà¢ tàÂàw ¡ÐwÐn Ñàmà Ñ mr wÑ §ý¢ Zà§ýàÊ §ý §ýàu ÂàÑã §ýÊ qàmà ñ ky ³wÊ ¡àÂà qÊ Ñ t ³uàÀà hv ÂàÑã qàm ñ qÊÂm Ñ t hvÂà §ýL §ýÌqÂàà §ýÊ y§ým Ñ ñ âkmÂàà jàÑ £mÂàà hvÂà §ýã §ýÌqÂàà §ýÊ y§ým Ñ ñ uÑ §ýÌqÂàà §ýÊÂà §ýL ÎààQý ÑÊ y t u £mÂàã Ñã rÂàã ÊÑmã Ñ ñ uÑ §ýt ÂàÑã Ñàmã ñ

Ñ t ysã t§ýàÂà t ÊÑm Ñ ñ u ysã t§ýàÂà tàÂàw Âà Ñã rÂàà¥ Ñ ñ u t§ýàÂà ¡Âà§ý Zà§ýàÊ §ý âÀhm Ñ ñ ¢yy uÑ qmà j vmà Ñ â§ý tàÂàw ¡Âà§ý Zà§ýàÊ §ý §ýÌqÂàà §ýÊmà Ñ ¥w £y yà§ýàÊ §ýÊmà Ñ ñ ¢y Ñ t §ýt ÐwmØàmà §ýÑm Ñ ñ Zà¾u§ý tàÂàw t §ýt ÐwmØàmà Ñàmã Ñ ñ

qÕàã sã ¡qÂàà i Ê rÂààm Ñ ñ ¢ÂÑ Ñ t iàyvà §ýÑm Ñ ñ ¥§ý Zàkààm §ýà iàyvà ¥§ý Ñã kyà Ñàmà Ñ ñ kr â§ý ysã tÂàÏuà §ý i Ê ¡vªà-¡vªà Zà§ýàÊ §ý Ñàm Ñ ñ tàÂàw §ý wÐØà sã ¡vªà-¡vªà Zà§ýàÊ §ý Ñàm Ñ ñ tàÂàw t §ýÌqÂàà Îàãvmà ¥w §ýt ÐwmØàmà Ñàmã Ñ ñ uÑ tàÂàw §ýà qÎà-qâÕàuà y ¡vªà qÑ jàÂà Àmà Ñ ñ

ysã tàÂàw §ýÌqÂààÎàãvmà ¥w §ýt ÐwmØàmà t y tàÂà Ñ ñ

Ñt qáÊwàÊ t ÊÑm Ñ qáÊwàÊ t Ñt tàÂàw yÈrÂo §ýà y t l m Ñ ñ

tàmà-âqmà ¡àÊ ysã r»þ âtv§ýÊ ÑtàÊà qàvÂà-qàx½à §ýÊm Ñ ñ £Âà§ýà §ýÑÂàà tàÂà§ýÊ Ñt kãÂà §ý ¼ªà yãhm Ñ ñ Ñt tàmà-âqmà §ý yÊÕà½à t kãÂàà jàÑm Ñ ñ Ñt tàmà-âqmà ¡àÊ qáÊwàÊ §ý ysã yÀÐuà qÊ âwÎwày §ýÊm Ñ ¡àÊ w sã Ñt qÊ âwÎwày §ýÊm Ñ ñ

sà¢-rÑÂà yàn-yàn ÊÑm Ñ, yàn-yàn hvm Ñ ¥w ¥§ý ÀyÊ §ýà yÑuàªà §ýÊm Ñ ñ

qáÊwàÊ t tàmà-âqmà, ÀàÀà-ÀàÀã, §ýà§ýà-§ýà§ýL yàn ÊÑ§ýÊ Ñt yàn-yàn kãÂà §ýL ZàÊ½àà Àm Ñ ñ

ysã r»þ iÊ §ý yàÊ §ýàuà §ýà §ýÊm Ñ ñ yàÊã ¡àwÎu§ýmà §ýà qÊà §ýÊm Ñ ñ ¡âmânuà §ý ¡àÂà qÊ £Âà§ýà y¼§ýàÊ §ýÊm Ñ ñ ²þà¹þ r°j, r»þà §ýà Àh§ýÊ §ýàu yãhm ÊÑm Ñ ñ Ñt vàªà r»þà §ýà Àh§ýÊ ¡°²þà ÍuwÑàÊ §ýÊÂàà sã yãhm Ñ ñ qáÊwàÊ t ysã Ñt y t l Âà ¥w yãhÂà §ý âv¥ âwùàvu skm Ñ ñ ÑtàÊã âÎàÕàà ¥w Zàªàâm §ýà ÁuàÂà Êhm Ñ ñ

tàÂàw, tàÂàw §ý yàn Ñã kãmà Ñ ñ tàÂàw §ý yàn kã §ýÊ ZàyÂÂà Ñàmà Ñ ñ ²þà¹þ âÎàÎà ÑÊ y t u tàmà-âqmà §ý yàn ÊÑ§ýÊ ZàyÂÂà Ñàm Ñ ñ nà»þ r»þ Ñàm Ñã w ¡qÂà sà¢-rÑÂàà §ý yàn hvÂàà ¥w i tÂàà jàÑm Ñ ñ ¥yà §ýÊÂà w ZàyÂÂà Ñàm Ñ ñ §ý²þ ¡àÊ r»þ Ñàm Ñã tàmà-âqmà £ÂÑ âÎàÕàà ZààÃm §ýÊÂà §ý âv¥ âwùàvu skm Ñ ñ âwùàvu t ¡Âà§ý yÑqàºþã Ñàm Ñ ñ âwùàvu t âÎàÕàà ÀÂà §ý âv¥ ¡Áuàq§ý ¥w ¡Áuàâq§ýà Ñàm Ñ ñ ¢Âà§ý yàn âwùànJ §ýà yÈrÂo ªàÚ-âÎàÏu yÈrÂo Ñàmà Ñ ñ ysã âwùànJ âÎàÏu-âÎàÏuà §ýÑvàm Ñ ñ

ªàÚkã Ðwu y t l ÀàÊ Ñàm Ñ ñ ªàÚkã âÎàÏuà §ýà £Âà§ý kãÂà §ý âv¥ £quàªàà ràmà §ýà y t l àm Ñ ¥w ¡àwÎu§ý §ýàuà §ýà yãhàm sã Ñ ñ

ysã âwùànJ ¡°²þã ràm ¥w ¡°²þ §ýàuà §ýà y t l Âàà ¥w yãhÂàà jàÑm Ñ ñ kàÂàÂà ¡àÊ y t l Âà §ýL ¢°²þà §ýà âkÖàày à §ýÑm Ñ ñ tàmà, âqmà ¡àÊ ªàÚ âkÖàày à §ýà qÊà §ýÊm Ñ ñ

ªàÚkÂàà §ý ¡àÖààqàvÂà, ¡ÂàyÊ½à ¡àÊ £Âà§ý y t l à¥ ràmà §ýà y t l Âà y âÎàÏu y t l ÀàÊ Ñàm Ñ ñ

tàÂàw ytàk

yyàÊ §ý ysã qáÊwàÊà §ý ytÑ §ýà ytàk §ýÑm Ñ ñ ¢y Zà§ýàÊ ytàk yÈq½à tàÂàw ytÀàu §ýà Âàà t Ñ ñ Zà¾u§ý âÎàÎà ¥w Zà¾u§ý tàÂàw, ¡h½»| ytàk §ýL ¥§ý ¢§ýà¢ Ñ ñ

ªààt, ÂàªàÊ, âkvà, ZàÀÎà, Êà˜| - u ysã tàÂàw ytàk §ý ²|à¹| - ²|à¹| ytÑ §ýà Âààt Ñ ñ ªààt ¥§ý ²|à¹|à §ýà ytÑ Ñàmà Ñ ñ ªààt t ¡Ââ§ý qáÊwàÊ Ñàm Ñ ñ ysã qáÊwàÊ ¡qÂàã ¡àwÎu§ýmà ¡à §ýà qÊà §ýÊÂà §ý âv¥ §ýà¢ Íuwyàu §ýàu §ýÊm Ñ ñ

ªààt t ÊÑÂà wàv ràv§ý-rââv§ýà ¡à §ý âv¥ âwùàvu Ñàmà Ñ ñ âwùàvu t âÎàÕàà - yÐ§ýàÊ §ýà §ýàu Ñàmà Ñ ñ âwùàvu t âwùànJ ¡ÁuuÂà §ýÊm Ñ ¥w ¡Áuàq§ý - ¡Áuââq§ýà ¡ÁuàqÂà §ýÊàm Ñ ñ

ªààt §ý vàªàà §ý ÐwàÐ¿u §ýà ÁuàÂà ÊhÂà §ý âv¥ ¥§ý ÐwàÐ¿u §ýÂô Ñàmà Ñ ñ ÐwàÐ¿u yut t ÐwàÐ¿u §ý ràÊ t kàÂà§ýÊ vàªà ÊÑm Ñ ¥w u vàªà ysã ªààtwââyuà §ýà ÐwÐn ÊÑÂà §ý mÊã§ý âyhàm Ñ ñ §ýà¢ ¡ÐwÐn Ñà kà¥ mà £y§ýà £qjàÊ sã §ýÊm Ñ ñ

ªààt t t©u Úq y §ýâx ¥w qÎàqàvÂà §ýà §ýàu Ñàmà Ñ ñ §ýâx §ý õàÊà ¡ÂÂà, Äýv, mÊ§ýàÊã, §ýqày, mv, tyàv §ýà £¾qàÀÂà Ñàmà Ñ ñ qÎàqàvÂà y Ào, ¤ýÂà ¥w hàÀ ZààÃm Ñàmà Ñ ñ ªààt t §ý¢ Zà§ýàÊ §ý £ùàªà sã Ñàm Ñ ky âtS|ã §ý rmÂà rÂààÂàà, v§ý»|ã §ý §ýàu ky - §ýyJ - ¹|rv rÂààÂàà, Ñv rÂààÂàà, rvªàà»|ã rÂààÂàà, vàÑ §ýà ¡àkàÊ rÂààÂàà ¡ââÀ ñ

qáÊwàÊ §ýL mÊÑ ªààt §ý vàªà sã yàn-yàn âtv§ýÊ ÊÑm Ñ ñ ¥§ý ÀyÊ §ýà yÑuàªà §ýÊm Ñ ñ ytu-ytu qÊ ªààw §ýL ysà vªàmã Ñ, âkyt ªààt Íuwðnà §ýà ¡àÊ ¡°²|à §ýÊÂà §ý âv¥ vàªà ylàw Àm Ñ ¥w ylàwà qÊ jjà §ýÊm Ñ ñ

ªààt t ¥§ý ²|à¹|à yà âwâÂàtu §ýÂô Ñàmà Ñ uÑà vàªà ¡qÂà õàÊà £¾qàÀÂà â§ý¥ ªà¥ wÐm ¡à §ýà vàm Ñ ¡àÊ £y§ý rÀv ¡qÂàã ¡àwÎu§ýmà §ýL ¡Âu wÐm ¡à §ýà v kàm Ñ ñ ¢y Ñà¹|uà ràkàÊ sã §ýÑm Ñ ñ

पूरकता

नदियॉ कल–कल, झरने झर–झर, सबकी प्यास बुझाते ।
पेड़ो का फल, बाड़ी का अन्न, सबकी भूख मिटाते । ।

खेतों का अन्न, गैया का पय, सबको बली बनाते ।
ममता माँ की, गौरव गुरू का, सबको सुखी बनाते । ।

पूरक सब के, प्यारे के, मुझको सभी बनाते ।
मानव बन मै, जीऊँ नित–नित, गुरूजी मुझे बतातें । ।

ikB&11

lqj{kk

शरीर की सुरक्षा से हम सभी परिचित हैं । शीत–ग्रीष्म से बचाव के लिए हम वस्त्र पहनते हैं, घरों में रहते हैं । इससे शरीर की सुरक्षा होती है । इसी प्रकार जूते से पैर की सुरक्षा होती है । शरीर की सुरक्षा के सभी उपाय माता पिता शैशव अवस्था से समझाते रहते हैं एवं अभ्यास कराते हैं । जैसे दाँतों की सफाई करते हैं । इसी प्रकार स्नान द्वारा प्रतिदिन शरीर की सफाई की जाती है, इससे शरीर की सुरक्षा होती है ।

हमारे उपयोग की वस्तुओं की भी सुरक्षा करते हैं। पुस्तकों के ऊपर मोटे कागज की परत चढ़ाकर सुरक्षित रखते हैं । पेन्सिल, कलम, रबर, की सुरक्षा के लिए एक डिब्बी में रखते हैं ।

वस्त्रों को सुरक्षित रखने के लिए इन्हें धोकर सुखाते हैं । ओढ़ने–बिछाने के कपड़ों को धूप में सुखाते हैं । कपड़ों को कीड़े से बचाने के लिए कई प्रकार के कीटनाशक जैसे नीम की पत्ती का उपयोग करते हैं ।

अनाज को लम्बे समय तक सुरक्षित रखा जाता है। क्योंकि अधिकांश अन्न वर्ष में एक बार उगते हैं एवं वर्ष भर उपयोग किया जाता है । इन्हें दीर्घकाल तक सुरक्षित रखने के लिए सुखे स्थान पर रखते हैं । डब्बों में बंद रखते हैं । साथ में कीटनाशक वस्तुओं को भी रखते हैं ।

क्या आपने सोचा है कि पकाए हुए भोजन की सुरक्षा कैसे की जाती है ? इन्हे कितने समय तक सुरक्षित रखा जाता है ? पका हुआ भोजन अधिक समय तक सुरक्षित नहीं रखा जा सकता । इसका सदुपयोग हो जाने से ही इनकी सुरक्षा हाती है । पका हुआ भोजन खा लेने पर भोजन का सदुपयोग होता है । खाने वाले व्यक्ति का पोषण होता है। पकाने का उद्देश्य भी यही है । इस प्रकार सदुपयोग ही सुरक्षा है ।

इसी प्रकार यदि नए कपड़े लिए जाएँ और 2–3 वर्ष तक सुरक्षित रखा जाय तो क्या 3 वर्ष बाद यह आपके शरीर में आएगा ? नही! यह छोटा हो जाएगा । कपड़े भी लम्बे समय में कमजोर होकर फटने लगते हैं । इन्हे समय रहते हुए उपयोग करना चाहिए ।

कपड़े के अतिरिक्त अनेक प्रकार के यंत्र का भी सदुपयोग आवश्यक है अन्यथा उनमें जंग लग जाता है । नया मकान बनाकर यदि लम्बे समय तक उपयोग न किया जाए तो उसमें कीड़े–मकोड़े अपना आवास बना लेते है । मकान में भी टूट–फूट होने लगती है । इसमें सुधार, लिपाई–पोताई या रंग करना आवश्यक है । मकान में रहते समय प्रतिदिन सफाई करते हैं, बीच–बीच में रंग करते हैं । टूट–फूट होने पर सुधार करते रहते हैं । इस प्रकार हम यह समझते हैं कि सदुपयोग करने पर वस्तुओं की सुरक्षा होती है ।

हमारे शरीर का सदुपयोग भी आवश्यक है । हम जो भी कार्य सीखते हैं उसका सदुपयोग न हो तो उसे भूलने लगते हैं । सदुपयोग होने से उनमें निखार आता है । हमारा सीखने में लगा हुआ श्रम सफल होता है ।

पाठ–12
vPNk cuuk pkgrk

साफ–साफ मैं रहता, और मिलकर खेलता ।
काम ठीक से करता, अच्छी बातें मानता । ।1।।
सही–सही मैं कहता, मीठी बोलें बोलता ।
सही मार्ग पर चलता, अच्छा बनना चाहता ।।2।।

पुस्तक ठीक से रखता, अच्छी बातें मानता ।
ध्यान लगा कर पढ़ता, अच्छी बातें सीखता । ।3।।
ठीक–ठीक मै लिखता, सही बातें सोचता ।
कार्य समय पर करता, अच्छा बनना चाहता ।।4।।

ikB&13
mRlo

प्रसन्नता को व्यक्त करना उत्सव कहलाता है । जब हम पसन्न होते हैं तो अपने माता–पिता, भाई–बहन, मित्र एवं गुरूजनों को बताते हैं । इसे सुनकर वे सभी प्रसन्न होते हैं । अनेक लोगों का साथ–साथ प्रसन्न रहना एवं प्रसन्नता को व्यक्त करना उत्सव कहलाता है ।

प्रसन्नता के अनेक अवसर होते हैं । परिवार में कोई सम्बन्धी जैसे मामा–मामी, नाना–नानी के आने पर सब बहुत प्रसन्न होते हैं । दिन भर सभी साथ–साथ रहते हैं । अपने अच्छे योजनाओं एवं कार्यो को सबको सुनाते है । अच्छे कार्यो को सुनकर सब प्रसन्न होते हैं । साथ–साथ रहकर भोजन बनाते हैं । साथ–साथ भोजन करते हैं । साथ–साथ भ्रमण के लिए भी जाते हैं । सभी कार्यक्रम साथ–साथ ही होते हैं । इस प्रकार साथ रहना ही उत्सव कहलाता है ।

परिवार के बाहर समाज में भी कई अवसरों पर उत्सव मनाया जाता है । इनमें से एक उत्सव विद्यालय का वार्षिक उत्सव होता है । इस दिन विद्यालय परिवार के सभी शिक्षक, छात्र–छात्राएँ मिलकर उत्सव मनाते हैं । कई दिन पूर्व से ही इसकी तैयारी करते हैं । समाज के अनेक व्यक्तियों को आदर पूर्वक आमंत्रित करते हैं । छात्र–छात्राओं के माता–पिता, अभिभावक एवं अन्य परिवारजनों को भी आदरपूर्वक बुलाते हैं । पूरा विद्यालय परिवार मिलकर उनका स्वागत करता है । सभी साथ–साथ बैठते हैं एवं विद्यालय के छात्रा–छात्राओं की प्रगति पर चर्चा करते हैं । उनके खेल–कूद के कौशल, गायन, वादन, नृत्य, भाषण कला एवं परस्पर सहयोग पर चर्चा एवं मूल्यांकन करते हैं । विद्यार्थियों के अच्छे आचरण, आज्ञापालन और अध्ययन पर प्रसन्नता व्यक्त करते हैं ।

अतिथिगण एवं अभिभावक विद्यार्थियों की उन्नति के लिए मार्गदर्शन एवं आशीर्वाद देते हैं । सभी के उज्जवल भविष्य की कामना करते हैं ।

विद्यालय परिवार सभी अतिथियों को पधारने एवं साथ–साथ रहकर विद्यार्थियों का उत्साहवर्धन करने के लिए उन्हे धन्यवाद देते हैं ।

ikB&14
ekuo d pkj vk;ke

प्रत्येक मानव के जीने के चार आयाम होते हैं। आयाम का अर्थ है जीने का स्तर। जैसे हम कुछ कार्य करते हैं तो यह जीने का एक स्तर हैं। इसे हम जीने का एक आयाम कहते हैं। मानव के जीने के चार आयाम हैं– 1. व्यवसाय, 2. व्यवहार 3. विचार और 4. अनुभव।

व्यवसाय : – यह मानव के जीने का एक स्तर है। मानव प्रकृति या प्राकृतिक वस्तुओं के साथ जो श्रम करता है उसे व्यवसाय कहते हैं। जैसे हम खेत में श्रम करते हैं, कपड़े का उत्पादन करते हैं, ट्रेक्टर चलाते हैं, पानी रोकने के लिए बाँध बनाते हैं, सिंचाई करते हैं, कम्प्यूटर का निर्माण करते है, बिगड़े हुए मशीनों का सुधार करते हैं।

व्यवसाय के द्वारा हम अपने परिवार के भोजन, वस्त्र, आवास, दूर–संचार तथा दूर गमन की आवश्यकता की पूर्ति करते हैं। जब हमारी आवश्यकता पूरी होती है तब हम संतुष्ट होते हैं।

व्यवहार :– यह मानव के जीने का एक अन्य स्तर है। मानव का दूसरे मानव के साथ श्रम व्यवहार कहलाता है। जैसे हम भाई–बहन साथ में जीते हैं, एक दूसरे की सहयोग करते हैं। माता–पिता बच्चों की देखभाल करते हैं। बच्चे माता–पिता का आज्ञापालन करते हैं। विद्यार्थी अध्यापक एवं अध्यापिकाओं की आज्ञा का पालन करते हैं।

व्यवहार के द्वारा हम लोग आपस में विश्वास, सम्मान एवं स्नेह पाना चाहते हैं।

विचार :– यह मानव के जीने का एक अन्य आयाम है। सोचना, निर्णय लेना विचार कहलाता है। किसी कार्य को करने का तरीका सोचना, अच्छा व्यवहार को समझना, एवं अच्छा व्यवहार करने के बारे में सोचना विचार कहलाता है।

समझने एवं समझाने के लिए मानव विचार करता है।

अनुभव :– सुखी होना एवं सबको सुखी करना अनुभव कहलाता है।

विचार, व्यवहार एवं व्यवसाय इन तीनो आयामों में ठीक से जीने पर मानव सुखी होता है ।

ikB&15
0;olk;

हमारे शरीर की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कई वस्तुओं की आवश्यकता होती है जैसे भोजन, वस्त्र, आवास। अन्य आवश्यकतओं को पूरा करने के लिए भी वस्तुओं की आवश्यकता होती है। जैसे– रेडियो, सायकिल, रेलगाड़ी, दूरदर्शन के यंत्र आदि।

इन सभी वस्तुओं को व्यवसाय के द्वारा प्राप्त करते हैं। इनमें से कुछ वस्तुओं को कृषि द्वारा प्राप्त किया जाता है जैसे– अन्न, शाक, तरकारी, फल,। श्रम द्वारा वस्तुएँ प्राप्त करना उत्पादन कहलाता है।

मकान बनाने के लिए ईंट, फर्शीपत्थर, चूना, सीमेंट, लकड़ी के किवाड़, लोहे की छड़ जैसे वस्तुओं की आवश्यकता होती है। इन वस्तुओं का भी उत्पादन होता है।

कपड़े, औजार, यंत्र, इंजन, इंधन, यान इन सभी वस्तुओं को उत्पादन द्वारा ही प्राप्त किया जाता है। ये सभी वस्तुएँ अलग–अलग स्थानों पर उत्पादित की जाती है।

नमक हमारे भोजन का अनिवार्य भाग है। समुद्र के पानी में नमक पाया जाता है। समुद्र के किनारे पानी को सुखाकर नमक प्राप्त किया जाता है। कहीं कहीं भूमि के भीतर से खुदाई द्वारा नमक प्राप्त किया जाता है। इन स्थानों से नमक अन्य स्थानों में भेजा जाता है।

जहां घने वन होते हैं वहाँ से जलाऊ लड़की, इमारती लकड़ी एवं औषधि का उत्पादन किया जाता है। श्रम से ही सारे व्यवसाय किए जाते हैं। अभ्यास के द्वारा हम श्रम करने के योग्य बनते हैं।

व्यवसाय के द्वारा हम अपनी आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। हमारे जीने में यह एक महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य भाग है।

ikB&16
fofue;

मानव–मानव के बीच में वस्तुओं के आदान प्रदान को विनिमय कहते हैं। विनिमय इसलिए करते हैं क्योंकि परिवार की सभी आवश्यक वस्तुएँ परिवार में नहीं बनती है। जैसे एक परिवार अनाज उत्पादन करता है एवं दूसरा परिवार वस्त्र का उत्पादन करता है। तो अनाज के बदले वस्त्र लेकर एक परिवार अपनी आवश्यकता को पूरा कर लेता है। इसी प्रकार दूसरे परिवार की आवश्यकता भी पूरी हो जाती है। इसी प्रकार मानव समाज में अनेक प्रकार की वस्तुओं को विनिमय होता है।

पहले मानव वस्तु का विनिमय करता था। कुछ समय बाद वस्तुओं का आदान प्रदान धातुओं के माध्यम से करने लगा। जैसे 1 बोरा अनाज लेना हो तो अनाज के बदले में एक सोने का सिक्का दे दिए। ऐसे सिक्कों को हम मुद्रा या प्रतीक मुद्रा कहते हैं। इसी प्रकार सोने के अतिरिक्त चांदी, तांबा, पीतल एवं लौह के सिक्के भी मुद्रा के रूप में उपयोग में आने लगे।

इसके साथ ही श्रम के बदले मुद्रा मिलने लगी एवं मुद्रा के बदले में अपने आवश्यकता की वस्तुएँ लेने लगे।

इस प्रकार वस्तु या श्रम का आदान प्रदान रूपये, पैसे के आधर पर होने लगा।

वस्तु एवं श्रम का विनिमय होता है।

विनिमय का उद्देश्य वस्तु एवं श्रम के बदले अन्य वस्तु या श्रम प्राप्त करना है।

ikB&17
'kjhj jpuk

हमारे शरीर में मुख्यतः 2 भाग होते हैं 1. सिर एवं 2 धड़। सिर में आंख, नाक, कान, मुँह, तथा माथा होता है। धड़ में हाथ, पैर, वक्ष, पीठ तथा हाथ–पैर होते हैं। शरीर का ढांचा हड्डियों से बना होता है। हड्डियों के ऊपर मांस होता है और मांस के ऊपर चमड़ी होती है। शरीर में रक्त होता है। चोट लगने या कट जाने पर रक्त बहने लगता है।

हम सभी मानव श्वांस लेते हैं। हम श्वांस छोड़ते भी हैं। श्वास द्वारा शुद्ध वायु ग्रहण करते हैं एवं अशुद्ध वायु छोड़ते हैं। श्वांस द्वारा शुद्ध वायु फेफड़े में पहुचकर रक्त में मिल जाता है। इससे रक्त शुद्ध होता है एवं शुद्ध रक्त पूरे शरीर में पहुंचता है।

जब श्वांस छोड़ते हैं तब शरीर की गंदगी एवं अशुद्धि शरीर के बाहर निकलती है। इससे शरीर स्वस्थ रहता है और शरीर को शक्ति मिलती है। हम थोड़ी देर तक श्वांस रोक सकते हैं। अधिक देर तक श्वांस रोकने पर घुटन होती है।

ikB&18
vkgkj

शरीर को स्वस्थ्य बनाए रखने के लिए हम भोजने करते हैं। यह आहार कहलाता है।

हम आहार में मुख्यतः वनस्पतियों का प्रयोग करते हैं। वनस्पतियों के सभी भाग जैसे– जड़, तना, पत्ती, फूल, फल, और बीज का प्रयोग करते हैं।

जड़ में गाजर, मूली, चुकन्दर, शलजम, का प्रयोग करते हैं। तना में शाक–भाजी, लालभाजी, जरी भाजी, पोई भाजी, चौंलाई भाजी का प्रयोग करते हैं।

पत्तियों में मूली, प्याज, लहसून, पालक, मेथी की पत्तियों का प्रयोग करते है।

फूल में गुलाब के फूल को गुलकंद बनाकर प्रयोग करते हैं। फूल गोभी, सहिजन के फूल, कुम्हड़े के फूल का भोजन में प्रयोग करते हैं।

कच्चे फल में लौकी, खीरा, ककड़ी, कच्चा केला, कच्चा पपीता, तरोई, टिण्डा का प्रयोग होता है।

पके फल में आम, केला, नीबू, संतरा, मुसंबी, तरबूज, खरबूजा, जामुन, अमरूद का प्रयोग करते हैं।

बीज में अनेक प्रकार के अन्न का प्रयोग करते हैं जैसे– चावल, गेहूँ, जौं, मक्का, ज्वार, बाजरा, तिलहन में तिल, फल्ली, सरसों, अलसी, बर्रे (कुसुम) एवं दलहन में चना, मटर, मूंग, अहरहर, सेम, उड़द, का प्रयोग करते हैं।

भोजन कच्चा या पकाकर खाते है। कच्चा खाने योग्य वस्तुओं में खीरा, मूली, गाजर, चुकन्दर, ककड़ी है। ये कच्चे फल एवं कंद हैं। पेड़ के पके फल जैसे आम, अमरूद, जामुन, संतरा, मुसंबी को आग पर बिना पकाये ही खाते हैं।

ikB&19
vk"kf/k

शरीर को स्वस्थ्य बनाए रखने के लिए शुद्धवायु, शुद्ध जल, पौष्टिक भोजन, व्यायाम, एवं विश्राम आवश्यक है। इनमें से किसी भी एक में गड़बड़ी होने पर शरीर अस्वस्थ होता है। कई बार किसी प्रकार के चोट एवं पशु–पक्षी या कीड़े–मकोड़े के आक्रमण से भी शरीर अस्वस्थ होता है।

अस्वस्थ शरीर को स्वस्थ बनाने के लिए अनुकूल भोजन, शुद्ध वायु, शुद्ध जल, एवं औषधियों की आवश्यकता होती है।

चोट लगने पर रक्त बहने लगता है। रक्त का बहना बंद करने के लिए कोई औषधि लगाते हैं। फिटकरी लगाने रक्त का बहना बंद हो जाता है। इसी प्रकार चूना लगाकर भी रक्त का बहना रोका जा सकता है।

सर्दी होने पर गर्म दूध में हल्दी मिलाकर पीते हैं। इससे सर्दी ठीक हो जाती है। तुलसी के पत्ते भी सर्दी एवं खांसी को ठीक करते हैं। काली मिर्च खाने से भी सर्दी और खांसी ठीक हो जाती है।

जब शरीर गर्म हो जाता है तो उसे ज्वर कहते हैं। ज्वर को ठीक करने के लिए अनेक प्रकार की औषधि का प्रयोग करते हैं। जैसे–गिलोय, तुलसी, चिरायता, पान के पत्ते, तुलसी, कालीमिर्च।

ikB&20
'kjhj LoPNrk

स्वस्थ रहने के लिए हम शरीर की सफाई करते हैं। हाथ से भोजन करते हैं इसलिए भोजन के पूर्व अच्छी तरह हाथ को धोते हैं।

हमारे शरीर से पसीना निकलता है। पसीने के द्वारा शरीर की गन्दगी बाहर निकलती है। इस गन्दगी को साफ करने के लिए हम स्नान करते हैं। शरीर को अच्छी तरह रगड़कर मैल दूर करते हैं। साबुन और पानी से हाथ धोते हैं। दिनभर बाहर घूमने एवं खेलने–कूदने से शरीर में धूल चिपकती है। स्नान के समय रगड़कर धूल को भी साफ करते हैं। दिनभर में 1 बार अवश्य स्नान करते हैं। अधिक गर्मी में 2 बार भी स्नान करते हैं।

स्नान के द्वारा शरीर का तापमान कम होता है एवं शरीर शीतल होता है। स्नान से शरीर की थकावट भी दूर होती है।

विश्राम से भी शरीर की थकावट दूर होती है एवं हम ताजा होकर पुनः कार्य करने के लिए तैयार होते हैं।

प्रतिदिन हमारे नाखून बढ़ते हैं। नाखूनों के बीच में मैल घुसे रहते हैं जो भोजन के साथ पेट में जाकर रोग पैदा करते हैं। इससे बचने के लिए नियमित रूप से नाखून काटते हैं। इसी प्रकार बाल भी बढ़ते हैं, उसमें धूल चिपकती है। सिर से भी पसीना निकलता है। अतः बालों को काटकर छोटा रखते हैं। यदि बाल बड़े हो तो उसकी सफाई में बहुत श्रम एवं समय लगाते हैं।

हाथ, पैर एवं चेहरा खुला रहता है। धूल, मिट्टी और धुँआ इन स्थानों पर अधिक चिपकते हैं। इसलिए हाथ, पैर एवं चेहरे को दिन में कई बार धोते हैं।

मुँह से जो भोजन करते हैं उसका कुछ भाग मुँह में रह जाता है जो बाद में सड़ता है। अतः भोजन के बाद अच्छी तरह कुल्ला करने से मुँह की सफाई हो जाती है। इससे मसूढ़े एवं दाँत स्वस्थ रहते हैं।

सुबह सोकर उठने से मुँह से दुर्गन्ध आती है। इससे पता चलता है कि भोजन के कुछ टुकड़े सड़ गए हैं। इन्हें अच्छी तरह साफ करते हैं। दाँतों के बीच फँसे मैल को निकालने के लिए दातून या कोमल ब्रश का उपयोग करते हैं। जीभ को भी साफ करते हैं।

इसी प्रकार आँख, कान और नाक से भी मैल निकलता है। इन्हें भी स्वच्छ बनाए रखते हैं।